युग-पुरुष

महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज

जीवन-वृत्त

आमुख

युग पुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज का जीवन-वृत्त दर्शाने वाली यह पुस्तिका उनकी **46** वीं पुण्यतिथि के अवसर पर गोरक्षपीठाधीश्वर **परमपूज्य महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज** की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् के द्वारा प्रकाशित की गई है। हिन्दू धर्म-संस्कृति के ध्वजवाहक, हिन्दुत्वनिष्ठ- राष्ट्रवादी राजनीति के पुरोधा, महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् के संस्थापक युग पुरुष ब्रह्मलीन महन्त जी महाराज के प्रति यह हमारी विनम्र श्रद्धांजलि है। हमें विश्वास है कि इससे हिन्दुत्व एवं राष्ट्रप्रेम, शैक्षिक पुनर्जागरण एवं राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के प्रति आस्थावान लोगों को अपेक्षित प्रेरणा एवं प्रकाश प्राप्त होगा।

गोरखपुर
अश्विन कृष्ण तृतीया सं० 2072
30 सितम्बर, 2015

महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्
सिविल लाइन्स, गोरखपुर

महन्त दिग्विजयनाथ-व्यक्तित्व और कृतित्व

प्रारम्भिक जीवनः-

युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी बचपन में राणा नान्हू सिंह के नाम से विख्यात थे। उनका आविर्भाव बाप्पा रावल के उस इतिहास प्रसिद्ध वंश में हुआ था, जिसमें उत्पन्न होकर राणा सांगा और महाराणा प्रताप जैसे स्वदेशाभिमानी वीरों ने देश और धर्म की रक्षा के लिए आजीवन संघर्ष किया।महाराणा प्रताप की तलवार ने जिस वंश के इतिहास को त्याग, वीरता और आत्म-सम्मान का इतिहास बना दिया, जिस धरती को शत्रुओं के रुधिर से सींच-सींच कर पवित्र और पूज्य बनाया, उसी मेवाड़ की धरती पर सिसोदिया वंश में जन्म लेकर राणा नान्हूसिंह ने भी अपने जीवन को त्याग और बलिदान का निदर्शन बना दिया।

राणा नान्हूसिंह का जन्म उदयपुर के राणा वंशी परिवार मे सन् १८९४ में वैशाखी पूर्णिमा को हुआ था। बचपन में ही माता-पिता के स्वर्गवासी हो जाने के कारण उनके पालन-पोषण का दायित्व उनके चाचा पर आ पड़ा। उस समय उदयपुर के निकट एक नाथ पंथी योगी महात्मा फूलनाथ साधनारत थे। वे गोरखपुर स्थित श्री गोरक्षनाथ मंदिर के तत्कालीन महन्त श्री बलभद्रनाथ जी के शिष्य और महन्त सुन्दरनाथ जी के गुरुभाई थे। बाल्यावस्था में ही राणा नान्हू सिंह के माता-पिता हैजे की बीमारी में मर चुके थे। उनके चाचा सम्पत्ति के लोभ में उनसे छुटकारा चाहते थे। उन्होंने महात्मा फूलनाथजी से निवेदन किया कि सन्तान-प्राप्ति हेतु हमने यह मनौती मानी थी कि अपनी प्रथम सन्तान श्री गुरु गोरक्षनाथजी को समर्पित करेंगे। उनकी कृपा से मेरे कईं सन्तानें हो गयीं हैं। अस्तु, मैं अपनी प्रथम सन्तान श्री गुरु गोरक्षनाथजी के चरणों में समर्पित करना चाहता हूँ, किन्तु घर के लोगों का इस बालक के प्रति विशेष स्नेह एवं ममत्व है। इस कारण वे उसको अपने से अलग नहीं करना चाहते हैं, जिससे मुझे बराबर हार्दिक कष्ट रहता हैं अतः आप मेरी इस मनौती को पूर्ण करने में सहायता करें। मैं गणगौरी के मेले के दिन जैसे ही बालक आप को समर्पित करूँ, आप उसे लेकर गोरखपुर चले जायें। अन्यथा घर के लोग उसे पुनः घर ले जायेंगे, जिसका मुझे जीवन भर खेद रहेगा। श्री बाबा फूलनाथजी को चाचा के षड्यंत्र का पता नहीं था। उन्होंने सहज ही में उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और योजनानुसार चाचा ने जैसे ही बच्चे को समर्पित किया, वे तुरन्त उसे लेकर गोरखपुर आ गये। गोरखपुर पहुँचने पर उन्होंने तत्कालीन योगिराज श्री बाबा गम्भीरनाथ जी एवं अन्य लोगों से बालक राणा नान्हू सिंह के श्री गोरक्षनाथ जी को समर्पित करने की कहानी से अवगत किया और बताया कि उदयपुर के राणा ने अपने पुत्र को श्री गोरक्षनाथ जी के चरणों में समर्पित किया है। उधर उदयपुर में षड्यंत्री चाचा द्वारा यह प्रचार किया जा रहा था कि बालक मेले में गायब हो गया और उसे खोजने के लिए बनावटी व्यग्रता दिखाई । बाद में जो बातें प्रकाश में आई, उनसे पता चला कि उस समय सारे राजस्थान मे बालक राणा नान्हू सिंह की तलाश दिखावे के लिए चाचा ने कराई। तालाब में डूबने की आशंका समाप्त करने के लिए तलाब में जाल भी डाला गया, किन्तु बालक का कहाँ पता चलता! वह तो एक साजिश के साथ गोरखपुर पहुँचा दिया गया । श्री गोरक्षनाथ मंदिर पर बालक नान्हू सिंह को साधु-संतों एवं सन्यासियों के सम्पर्क में रहना पड़ा। राजवंश में उत्पन्न इस बालक

को मंदिर में निवास करने वाला साधु-समाज आश्चर्य और आशंका मिश्रित कौतूहल से देखता था। उन्हें यह विश्वास था कि मंदिर के वातावरण में यह बालक अधिक दिनों तक टिक नहीं पायेगा। किन्तु बालक नान्हू सिंह को उसी समय योगीराज गम्भीरनाथ जी की अहैतुकी कृपा प्राप्त हो गई । योगिराज गम्भीरनाथ जी उस समय के सर्वाधिक प्रतिष्ठित और ख्यातिलब्ध योगी थे। उनकी स्नेहच्छाया में बालक नान्हू सिंह को व्यवधानविहीन जीवन व्यतीत करने का अवसर मिला। नन्हें बालक की प्रतिभा को देखकर ही उस महान साधक ने उन्हें आशीर्वाद दिया था कि भविष्य में वह महान् यश की उपलब्धि करेगा।

शिक्षा:-

मंदिर की ओर से ही बालक नान्हू सिंह की प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था की गई। स्थानीय जुबली हाई स्कूल में उन्होंने सातवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की। प्रारम्भ से ही वे बड़े स्वाभीमानी थे। जुबली हाई स्कूल के तत्कालीन प्रधानाचार्य राय साहब अघोरनाथ चट्टोपाध्याय से उनकी अनबन हो गई। फलतः उन्होंने सातवीं कक्षा के बाद स्कूल का परित्याग कर दिया। फिर उन्होंने स्थानीय हाई स्कूल में प्रवेश लिया, जो आजकल महात्मा गांधी इण्टर कालेज के नाम से विख्यात है। सेन्टएण्ड्रूज कालेज में उन्होंने इण्टरमीडिएट में प्रवेश लिया । सन् १९२० ई० में राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होंने विद्यालय का परित्याग कर दिया और वे सक्रिय रूप से देश के स्वतंत्रता आंदोलन में सम्मिलित हो गये।

बालक नान्हू सिंह सदा एक औसत छात्र रहे। किन्तु विद्यालय के पाठ्यक्रमेतर कार्यक्रमों में वे सर्वदा सर्वाधिक उत्साह से भाग लेते थे। सभा-सोसाइटी तथा व्याख्यान आदि का आयोजन करने और उनमे सोत्साह भाग लेने, छात्रों को संगठित करने तथा विभिन्न प्रकार की क्रीड़ाओं की व्यवस्था करने में वे अत्यन्त कुशल थे। नेतृत्व, निर्भीकता, स्वाभिमान, अनुशासनप्रियता, प्रत्युत्पन्नमतित्व और कार्यकुशलता उनके जीवन के प्रधान गुण थे। छात्र-जीवन में बीज-रूप में अंकुरित ये गुण उनके भावी जीवन में पूर्णतया पल्लवित और पुष्पित हुए। इन्हीं गुणों के बल पर बालक नान्हू सिंह ने आगे चलकर दिग्विजयनाथ के अभिधान को सार्थक करते हुए जीवन के समस्त धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक क्षेत्रों को अपनी स्वतःसम्भूत प्रखर बौद्धिकता से भली-भाँति आलोकित किया।

क्रीड़ा के क्षेत्र में:-

छात्र-जीवन में वे हाकी के श्रेष्ठ खिलाड़ी थे। मैदान में उतरने के पश्चात वे अपने व्यक्तित्व, व्यवहार और कौशल के कारण समूचे जनसमूह पर छा जाते थे। दर्शकों की दृष्टि निरन्तर उनका ही अनुगमन करती रहती थी। वे सेन्टर फारवर्ड और राइट आउट दोनों स्थानों से समान कुशलता के साथ खेल लेते थे। खेल के प्रति उन्हें इतना मोह था कि बाद के जीवन में भी वे जब कभी संध्या के समय महाराणा प्रताप कालेज की ओर निकल आते और बच्चों को हाकी खेलते देख लेते तो वे खेलने का लोभ संवरण नहीं कर पाते थे। छात्र-जीवन समाप्त करने के बाद भी वे सेन्टऐन्ड्रयूज कालेज में बराबर हाकी खेलने जाया करते थे। इसके अतिरिक्त बैडमिंटन और टेनिस में भी उनकी अधिक रूचि थी। इन दोनों खेलों की व्यवस्था उन्होंने मंदिर पर भी कर रखी थी। उनकी साथ टेनिस खेलने वाले लोग आज भी मुक्त कण्ठ से उनकी प्रंशसा करते हैं। घुड़सवारी तो उनके नित्य जीवन का एक अंग था ही।

हिन्दु धर्म और संस्कृति से प्रेमः-

विद्यार्थी जीवन में ही राणा नान्हू सिंह के हृदय में हिन्दू जाति, हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति के प्रति पूरी आस्था थी । योगिराज गम्भीरनाथ जी के चरणों में बैठकर उन्होंने सर्वप्रथम हिन्दू संस्कृति के मूल तत्वों को पहचानने का प्रयास किया । विद्यार्थी जीवन की धर्म-प्रेम सम्बन्धी कुछ घटनायें अविस्मरणीय हैं।

राणा नान्हू सिंह (महंत दिग्विजयनाथजी) आठवीं कक्षा के छात्र थे। उस समय वर्तमान राजकीय टेक्निकल स्कूल के निकट बने एक छोटे शिव मंदिर को लेकर एक विवाद खड़ा हो गया टेक्निकल स्कूल के पास की भूमि रेलवे कर्मचारियों के आवास के लिए अधिगृहीत की जा रही थी। उसी भू-भाग में एक लुहार द्वारा निर्मित शिव मंदिर सार्वजनिक उपासना का केन्द्र बन चुका था। जब उसे गिरवाने का प्रयास किया जाने लगा तो राणा नान्हू सिंह के नेतृत्व में विद्यार्थियों के एक विशाल समूह ने रेलवे के तत्कालीन चीफ इंजीनियर ममी साहब का बंगला घेर लिया। उस समय छात्रों के साथ नृसिंह प्रसाद एडवोकेट भी थे। छात्रों के विशाल परेड का नेतृत्व करने के कारण राणा नान्हू सिंह और स्थानीय रईस बाबू पुरुषोत्तमदास जी को पकड़कर हवालात में डाल दिया गया। बाद में समझौता हुआ और मंदिर गिरने से बच गया।

सन् १९१८ में जब वे कक्षा ९ के छात्र थे, उस समय गोरखनाथ मंदिर के अहाते में ईसाई मत-प्रचारक कैम्प लगाकर अपने मत का प्रचार कर रहे थे। कई वर्षों से वे यह कार्य करते आ रहे थे। एक हिन्दू मदिर के प्रांगण मे हिन्दू धर्म के ही विरुद्ध प्रचार किया जाए, इसे राणा नान्हू सिंह सहन न कर सके। विद्यार्थियों का एक विशाल समूह लेकर उन्होंने ईसाई मत प्रचारक कैम्पों पर आक्रमण कर दिया। कैम्प उजाड़ डाले गये। ईसाई धर्म की पुस्तकों को पोखरे में जल-समाधि दे दी गई। इसके बाद कभी किसी ईसाई प्रचारक का मंदिर के पावन प्रांगण में जाने का साहस न हुआ।

इस घटना से समस्त प्रशासकीय अधिकारी अप्रसन्न हो गये। उस समय स्थानीय कमिश्नर, कलैक्टर और एस.पी. सब के सब ईसाई धर्मावलंबी थें उन्होंने मुकददमा चलाना चाहा, किन्तु नगर के कुछ प्रतिष्ठित सज्जनों के हस्तक्षेप के कारण यह कार्यवाही रूक गई।

राजनैतिक गतिविधियों से सम्पर्कः-

राणा नान्हू सिंह का विद्यार्थी जीवन भारतीय पराधीनता का कठोरतम समय था। अंग्रेजी शासन की कठोरता और दमन की दुर्दमनीयता के कारण साधारण जनता में नौकरशाही के विरुद्ध आवाज उठाने का साहस न था। तथापि उस अवस्था में भी राष्ट्र से प्रेम रखने वाले लोगों की कमी न थी। विदेशी शासन सत्ता को उन्मूलित करके राष्ट्र को स्वाधीन बनाने का प्रयास करने वाले इन राष्ट्रभक्तों के दो वर्ग थे। एक वर्ग ऐसे लोगों का था, जो प्रत्यक्ष रूप से जनता के मध्य जागरण का संदेश देता रहता था। सरकारी अधिकारियों से मिलकर जनता के कष्टों को दूर करने का प्रयास करता था और आवश्यकता पड़ने पर सत्याग्रह आदि का भी सहारा लेता था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस आदि से संबंधित लोग इसी वर्ग के थे।

दूसरे वर्ग में वे लोग थे, जो सरकारी कार्यों में व्यवधान उत्पन्न करते थे। सरकारी खजानों को लूटते,

नौकरशाही के विभिन्न शिकंजों को तोड़कर आतंक का वातावरण उत्पन्न कर के विदेशी शासन सत्ता को दहला देने का प्रयास करते थे। ऐसे लोग गुप्त संगठनों के माध्यम से कार्य करते हुए स्वाधीनता प्राप्ति के लिए एक युगान्तरकारी क्रांति का बीजारोपण कर रहे थे।

राणा नान्हू सिंह ने विद्यार्थी जीवन में दोनो वर्गो से संबंध स्थापित किया। उनके हृदय में हिन्दू धर्म, हिन्दू जाति, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू राष्ट्र के प्रति संस्कारतः अंकुरित उत्कट प्रेम और बलिदान की भावना उन्हें एक सही दिशा प्रदान करने के लिए जागरूक थी। उस काल में ही उन्होंने अनेक क्रांतिकारियों से भी संपर्क स्थापित किया था, जो यथा अवसर मन्दिर पर भी आया करते थे।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में भारतीय जनता की भावनाओं का नेतृत्व भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के हाथों में आ गया था। कांग्रेस में भी दो प्रकार के लोग थे। एक उग्रवादी, जो प्रत्यक्ष ध्वन्सात्मक कार्यवाही में विश्वास करते थे। दूसरे समझौतावादी, जो अपने नम्र विचारों के कारण 'नरम दल'' के नाम से सम्बोधित किये जाते थे। उस समय कांग्रेस का नेतृत्व महात्मा गाँधी जैसे नरम दलीय नेता के हाथों में आ रहा था।

सन् १९२० में महात्मा गाँधी का गोरखपुर में भव्य स्वागत हुआ। बाले के मैदान में महात्मा गाँधी ने एक विशाल जनसमूह को सम्बोधित किया। राणा नान्हू सिंह ने गाँधी जी के कार्यक्रम की निर्विघ्न समाप्ति के लिए 'वालेन्टियर कोर' का संगठन किया था और गाँधी जी के कार्यों को पूरा करने में तन-मन-धन से सहयोग किया। किन्तु थोड़े दिनों के पश्चात् चौरीचौरा की प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना ने यह सिद्धकर दिया कि राणा नान्हू सिंह (पूज्य महंत दिग्विजयनाथजी) महात्मा गाँधी के समझौतावादी सिद्धांतों के पोषक न थे। सन् १९२१ में महात्मा गाँधी का राष्ट्रव्यापी असहयोग आंदोलन प्रारम्भ हुआ। राष्ट्र प्रेमी युवकों ने अपने अध्ययन- अध्यापन, नौकरी तथा व्यवसाय आदि का परित्याग कर असहयोग आंदोलन में भाग लिया। इस समय पूर्वी उत्तर प्रदेश में विशेष रूप से गोरखपुर, देवरिया जनपद में कांग्रेस का संगठन अत्यंत शक्तिहीन था। राणा नान्हू सिंह ने इन आंदोलनों से प्रभावित होकर सन् १९२० ई० में ही कालेज का परित्याग कर दिया था। उन्होंने असहयोग आंदोलन को सफल बनाने का पूरा प्रयास किया।

गोरखपुर जिले में स्थित चौरीचौरा स्थान पर आंदालेन के खिलाफ की जो प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई, उससे नौकरशाही तो आतंकित हुई ही, महात्मा गाँधी के अहिंसात्मक आंदोलन का रूप ही बदल गया। उन्हें बहुत शीघ्र ही अपना आंदोलन वापस लेना पड़ा। इस चौरीचौरा काण्ड के अभियुक्तों को फांसी की सजा देने का निर्णय किया गया था। उनमें राणा नान्हू सिंह भी थे। किन्तु शिनाख्त (Identification) न हो पाने के कारण वे मुक्त कर दिये गये।

बाल जीवन की कुछ प्रमुख घटनायें:-

गोरखनाथ मंदिर पर आने के पश्चात् उनको योगिराज गम्भीरनाथजी की कृपा प्राप्त हो गई थी। संभवतः बालक की विलक्षण प्रतिभा को पहचान कर ही उन्होंने उसे संरक्षण देना प्रारम्भ कर दिया था। योगिराज गम्भीरनाथजी महान विभूति सम्पन्न सिद्ध योगी थे। वे आधिभौतिक संबंधों का परित्याग कर चुके थे। उनके स्वाभाविक गाम्भीर्य एवं तपोपूत निःस्पृह व्यक्तित्व से प्रभावित बालक नान्हू सिंह के मन में एक

आध्यात्मिक जिज्ञासा बलवती होने लगी। योगिराज गम्भीरनाथ जी ने उन्हें अपने शिष्य महात्मा ब्रह्मनाथ जी के सरंक्षण में देकर उनके पालन-पोषण तथा शिक्षा आदि की पूरी व्यवस्था कर दी थी। योगिराज सिद्ध महात्मा थे। बालक के प्रति उनके मन में अपार स्नेह था।

योगिराज अपने योगबल से अलौकिक कार्य करने में समर्थ थे। उन्होंने बालक नान्हू सिंह के जीवन को प्रभावित करने वाले अनेक चमत्कारिक कार्य किये थे, जिनका उल्लेख ब्रह्मलीन महंत जी प्रायः किया करते थे। ८-९ वर्ष की अवस्था में बालक नान्हू सिंह गम्भीर रूप से बीमार पड़े। उनका शरीर ज्वर-ताप से दग्ध होने लगा। जब साधुओं ने योगिराज को बालक की बीमारी का समाचार सुनाया तो उन्होंने एक कूड़ी के जल पर हाथ फेर कर उन्हें पिला दिया। ज्वर का ताप तत्काल समाप्त हो गया।

इसी तरह १३-१४ वर्ष की अवस्था में एक घटना और घटित हुई। एक दिन एक वृद्ध एक पुरानी अचकन और पाजामा लिए हुए आया। पूज्य योगिराज के आदेश से नान्हू सिंह ने इच्छा न रहते हुए भी उसे धारण कर लिया। उसकी जेब में हाथ डाला तो उसमें से केशों का एक लट निकला। रात्रि में उन्हें जोर का बुखार चढ़ा और दो-एक दिनों के पश्चात चेचक निकल आई। चेचक का इतना भयंकर प्रकोप हुआ कि उससे बचना असम्भव ज्ञात होने लगा। जब योगिराज गम्भीरनाथ जी को बालक के संज्ञाशून्य होने का समाचार दिया गया तो उन्होंने उनके निश्चेष्ट शरीर को मंगवाकर अपनी चारपाई के नीचे रखवा लिया। सवेरे लोगों ने उन्हें जीवित पाया।

अन्य घटनायें:-

स्थानीय हाई स्कूल में उनके एक अध्यापक यदुनाथ चक्रवर्ती थे। वे बड़े ही सरल स्वभाव वाले थे। राणा नान्हू सिंह के हृदय में उनके प्रति सात्विक श्रद्धा थी। उक्त अध्यापक को अवकाश प्राप्ति की आयु के पूर्व ही विद्यालय की सेवाओं से मुक्त कर दिया गया। उस समय राणा नान्हू सिंह गोरक्षनाथ मंदिर के महन्त हो चुके थे। उन्होंने अपने अन्य सहयोगियों से परामर्श कर तत्काल एक नये विद्यालय की स्थापना कर दी। यह विद्यालय 'गुडलक विद्यालय' के नाम से बक्शीपुर मुहल्ले में एक किराये के मकान में प्रारम्भ हुआ और श्री यदुनाथ चक्रवर्ती को ही विद्यालय को संचालित करने का कार्य सौंपा गया। उन्हें उसका प्रधानाचार्य बना दिया गया। कालांतर में इसी विद्यालय ने विकसित होकर महाराणा प्रताप इण्टर कालेज का रूप धारण कर लिया।

विद्यार्थी जीवन में अपने शिक्षा-गुरु के प्रति उनके मन में जो श्रद्धा और आदर का भाव था, उसी के निर्वाह के लिए उन्होंने इतने बडे विद्यालय की स्थापना कर डाली। यह वस्तुतः उनके स्वाभिमान और गुरुभक्ति का सच्चा उदाहरण है।

गद्दी के लिए विवाद, दीक्षा और अभिषेक:-

सन् १९२१ ई० में छात्र जीवन का परित्याग करने के बाद राणा नान्हू सिंह राजनीतिक कार्यों में अधिक रूचि लेने लगे। इधर गोरखपुर मठ के महंत पद को लेकर पहले से ही विवाद चल रहा था। तत्कालीन महंत सुन्दरनाथ जी तथा महंत ब्रह्मनाथजी का स्वत्वाधिकार संबंधी विवाद हाईकोर्ट तक पहुँच गया था। इन आंतरिक एवं बाह्य, गृह संबंधी एवं राजनीतिक विवादों में फंसकर जीवन का अस्त-व्यस्त हो

जाना स्वाभाविक है। किन्तु उन्होंने बड़े ही धैर्य के साथ परिस्थितियों का सामना किया और अन्ततः वे विजयी रहे।

विवाद

सन् १८८० ई० में महंत गोपालनाथजी की महासमाधि के पश्चात् योगिराज गम्भीरनाथ जी के ज्येष्ट गुरुभाई महात्मा बलभद्रनाथजी महंत हुए। सन् १८८१ में उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके शिष्य बाबा दिलवरनाथ गद्दी पर आसीन हुए। १४ अगस्त सन् १८९६ को उनका देहांत हो गया। उस समय समस्त साधु-संतों ने योगिराज गंभीरनाथ जी से गद्दी पर बैठने का आग्रह किया। किन्तु उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। फलतः बाबा दिलवरनाथजी के गुरुभाई (महंत बलभद्र नाथ जी के शिष्य) महात्मा सुन्दरनाथजी का महंत पद पर अभिषेक किया गया। लोगों के मन में यह विश्वास बद्धमूल था कि महंत सुन्दरनाथ गद्दी के गौरव का निर्वाह करने में सफल न होंगे। सचमुच गद्दी मिलने के पश्चात महंत सुन्दरनाथ इस मंदिर की व्यवस्था सुचारू रूप से चलाने में असमर्थ रहे।

गोरक्षनाथ मंदिर के साधुओं और नगर के सभ्रांत लोगों ने गया में जाकर योगिराज गम्भीरनाथजी से महंत सुन्दरनाथ जी की शिकायत की। योगिराज ने अनेक बार गोरखपुर आकर परिस्थितियों को सुलझाने का प्रयास किया किन्तु बाबा सुन्दरनाथ के ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

सन् १९०६ में योगिराज को दूसरी बार गया से गोरखपुर लाया गया। सब लोग चाहते थे कि महंत सुन्दरनाथ को पदच्युत कर दिया जाये किंतु योगिराज ने ऐसा होने न दिया। उन्होंने एक कार्य अवश्य किया। उन्होंने महंत सुन्दरनाथ से २५ जून १९०९ को एक इकरारनामा लिखवाया कि मंदिर की व्यवस्था सम्बन्धी किसी कार्य में उन्हें हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है, और वे किसी को दीक्षा नहीं दे सकते। उन्हें माहवारी व्यय के लिए निश्चित धनराशि मिलने लगी। योगिराज गम्भीनाथजी उसी समय से गोरखपुर में रहने लगे। २१ मार्च १९१७ को वे ब्रह्मलीन हुए। अगस्त सन् १९१७ में महंतजी सुन्दरनाथ ने गोरखपुर के सब-आर्डीनेट जज की अदालत में महात्मा ब्रह्मनाथजी के विरुद्ध एक वाद प्रस्तुत किया। १५ जून १९१८ को जज ने महंत सुन्दरनाथजी के पक्ष में फैसला कर दिया। २४ अक्टूबर १९१८ को बाबा ब्रह्मनाथ ने जिला न्यायालय में अपील की किन्तु सफलता न मिली। उन्होंने हाई कोर्ट इलाहाबाद में अपील की। एक मार्च १९२१ को पुनः बाबा ब्रह्मनाथ के विरुद्ध फैसला हुआ।

अपने गुरु बाबा ब्रह्मनाथ की पराजय से दिग्विजयनाथजी को घोर कष्ट हुआ। यद्यपि बाबा ब्रह्मनाथजी ने उन्हें विधिवत दीक्षित नहीं किया था तथापि वे उन्हें गुरु तुल्य मानते थे। मुकदमे के समय सुंदरनाथ ने उन्हें प्रलोभन देकर बाबा ब्रह्मनाथ से अलग करने का बहुत प्रयास किया, किंतु वे टस से मस न हुए। अब उन्होंने बाबा ब्रह्मनाथ जी की विजय के लिए प्रयास प्रारम्भ कर दिया। सन् १९२१ में मुकदमें में पराजित हो जाने के पश्चात बाबा ब्रह्मनाथ और श्री महाराज को गोरक्षनाथ सिद्धपीठ छोड़ देना पड़ा। बाबा ब्रह्मनाथ जी मानसरोवर (गोरखपुर) और श्री महाराज क्षत्रिय छात्रावास में रहने लगे। १९२२ में उपर्युक्त मुकदमें की अपील हाई कोर्ट में हुई यह मुकदमा अभी चल ही रहा था कि १९२४ में महंत सुंदरनाथ का देहावसान हो गया। बाबा ब्रह्मनाथ जी को तुरंत बुलाया गया। वे उस समय गुजरात गये हुये

थे। स्वर्गीय महंत सुंदरनाथ ने बाबा गोकुलनाथ को एक वसीयत लिखवाई कि उनका शिष्य होने के कारण वे ही गद्दी के अधिकारी होंगे, यद्यपि योगिराज गम्भीरनाथजी ने अपने जीवनकाल में ही महंतजी सुंदरनाथ जी से यह इकरारनामा लिखवा लिया था कि उन्हें किसी को दीक्षित करने का अधिकार नहीं है। अपने को गद्दी का वास्तविक अधिकारी प्रमाणित करने लिए बाबा ब्रह्मनाथ ने दीवानी में दावा किया। सन् १९२७ में वे विजयी घोषित हुए। बाबा गोकुलनाथ ने इलाहाबाद हाई कोर्ट में अपील की किंतु १९३२ में हाई कोर्ट ने भी बाबा ब्रह्मनाथ जी के पक्ष में फैसला किया। इस तरह बाबा ब्रह्मनाथ जी सन् १९३२ में गोरक्षपीठ के महंत हुए। १५ अगस्त सन् १९३३ में महंत ब्रह्मनाथजी ने दिग्विजयनाथजी को विधिवत योगधर्म एवं नाथ सम्प्रदाय की दीक्षा दी। इस समय तक वे अपने पुराने नाम से ही पुकारे जाते थे।

सन् १९३५ में महंत ब्रह्मनाथजी का गोलोक वास हो गया। उनके ब्रह्मलीन होने के पश्चात श्रावण पूर्णिमा के दिन १५ अगस्त सन् १९३५ में पूज्य दिग्विजयनाथजी गोरक्षनाथ मंदिर के पीठाधीश्वर पद पर अभिषिक्त हुए। जिस समय पूज्य महंतजी ने गोरक्षनाथ पीठाधीश्वर का उत्तरदायित्वपूर्ण पद ग्रहण किया उस समय मंदिर की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। लगभग एक दशक पूर्व से निरन्तर मुकदमें की पैरवी में लगे रहने के कारण पूर्वाधिकारियों ने मंदिर की व्यवस्था पर ध्यान नहीं दिया था। पूज्य महंत दिग्विजयनाथ जी ने मंदिर के विकास की योजनाएं बनायी और तत्काल योजनाबद्ध रूप से इन कार्यों के सम्पादन में लग गये। मंदिर के पुनर्निर्माण और क्षेत्र-विस्तार के साथ उन्होंने सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और राजनैतिक कार्यों का भी सफलता पूर्वक संचालन किया। उनकी कारयित्री प्रतिभा एवं समय की गतिविधियों को पहचान कर कार्य करने की अदभुत क्षमता ने दो-तीन दशकों में ही मंदिर को पूर्वाचल का ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण भारत का एक प्रसिद्ध तीर्थ और पर्यटन केन्द्र बना दिया। आज गोरक्षनाथ मंदिर हिन्दू संस्कृति का प्रमुख केन्द्र बन गया है।

गोरक्षनाथ मंदिर

नाथ सम्पद्राय के आदि प्रवर्तक आदिनाथ और उसे शक्ति प्रदान करने वाले महान साधक श्री मत्स्येन्द्रनाथ तथा गुरु गोरक्षनाथ के गौरव का पुण्य प्रतीक यह मंदिर उसी स्थान पर निर्मित है, जहाँ महायोगी गुरु गोरक्षनाथ ने योग की साधना की थी। उन्होंने इस पुण्य-स्थली पर तपस्या के द्वारा उस ज्ञान-ज्योति की प्राप्ति की थी, जिसके प्रकाश में केवल उत्तरी भारत और हिमाचल के क्षेत्र ही नहीं, समूचे भारतवर्ष और पड़ोसी देशों ने भी योग की शाश्वत सत्ता को हृदयंगम किया था। योगिराज गोरक्षनाथ की अखण्ड साधना, अलौकिक सिद्धि एवं शाश्वत आध्यात्मिक जीवन-दृष्टि के कारण ही उनके अनुयायी उन्हें अजर-अमर मानते हैं और उनका अस्तित्व सतयुग, त्रेता, द्वापर, और कलियुग सभी कालों में एक समान स्वीकार करते हैं।

महान गुरु गोरक्षनाथ की यह तपस्या भूमि प्रारभ में एक तपोवन के रूप में ही रही होगी। इस जन-शून्य शान्त तपोवन में योगियों के निवास के लिए कुछ छोटे-छोटे मठ रहे होंगे। मंदिर का निर्माण बाद में हुआ होगा। आज हम जिस विशाल और भव्य मंदिर का दर्शन करके हर्ष और विस्मय का एक साथ

अनुभव करते हैं, वह पूज्य श्री दिग्विजयनाथ जी महाराज की ही देन हैं। पुराना मंदिर इस नव-निर्माण की विशालता और व्यापकता में समाहित हो गया है। यह कहना अधिक समीचीन ज्ञात होता है कि पुराने मंदिर ने अपनी विशाल साधना का चतुर्दिक प्रसार करके आज के अर्थवाद स्थूल संसार को अपनी शाश्वत महानता का अनुभव करने का अवसर दिया है।

पुराने मंदिर का निर्माण कब और किसके द्वारा हुआ, यह ज्ञात नहीं हैं मुस्लिम शासन काल में अनेक बार इस मंदिर को नष्ट किया गया किंतु महान योगी गोरक्षनाथ की तपस्या-स्थली पर निर्मित इस मंदिर ने अपनी विशेषताओं को निरंतर अक्षुण्ण रखा। अलाउद्दीन के शासनकाल में मन्दिर को पूर्णतया ध्वस्त कर दिया गया था। यहाँ पर निवास करने वाले योगियों और साधकों को निष्कासित कर दिया गया था। किन्तु थोड़े दिन के पश्चात् मंदिर का पुनर्निर्माण हो गया था और साधक योगी भी यथा स्थान समासीन हो गए थें। औरंगजेब की हिन्दू धर्म विरोधी नीति का भी इसे शिकार होना पड़ा था। मंदिर पुनः नष्ट कर दिया गया, किंतु अवसर मिलते ही उसका पुनर्निर्माण हो गया। बार-बार निर्मित होने पर भी इसके मूल स्थान में कुछ भी परिवर्तन नहीं किया गया।

मंदिर का प्रांगणः-

श्री महंत के रूप में गोरक्षनाथ पीठ पर आसीन होते ही महंत जी ने मंदिर के विस्तार का संकल्प तो किया ही उन्होंने मंदिर के प्रांगण को अत्यंत विस्तृत, हरा-भरा और अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र के अनुकूल उपकरणों से युक्त करने का भी निश्चय किया। आज मंदिर की विराट भव्यता तो पर्यटकों और श्रद्धालुओं को आकर्षित करती ही है, उसका प्रांगण भी दर्शकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बन गया है। प्रतिदिन सहòkas स्त्री-पुरुष मंदिर में दर्शन करते आते हैं। पर्वों के अवसर पर उनकी संख्या अगणित हो जाती है। मंदिर के विस्तार कार्य के साथ ही महंतजी ने पुराने मठ के स्थान पर विशाल मठ का निर्माण प्रारम्भ करा दिया। सन् १९५३ में यह विशाल प्रासाद पूर्ण हुआ।

१९५६-५७ में उन्होंने प्रांगण में स्थित सरोवर का निर्माण कराया। इसी वर्ष उन्होंने साधु-सन्यासियों के आवास के लिए एक भवन का निर्माण कराया जिसे संत निवास के नाम से अभिहित किया जाता है। श्री गोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ भवन का निर्माण १९५७-५८ में हुआ। योगिराज गम्भीरनाथ तथा अपने गुरु बाबा ब्रह्मनाथ की समाधियों का निर्माण भी उन्होंने कराया। मंदिर से संबंधित सारी भूमि के चारों ओर सुदृढ़ प्राचीर का निर्माण कराया। वाटिका, लॉन और फूलों की क्यारियों से उन्होंने समूचे प्रांगण को हरा-भरा कर दिया। आज गोरक्षनाथ मंदिर के प्रांगण के भवन, उनका शिल्प तथा उन पर उत्कीर्ण कला के नमूने पूज्य महंतजी की सुरूचि सम्पन्नता, सूक्ष्मदर्शिता की स्पष्ट अभिव्यक्ति कर रहे है।

गोरक्षनाथ मंदिर हिन्दू धर्म और संस्कृति का केन्दः-

महंत दिग्विजयनाथ जी ने मंदिर को नवीन रूप से व्यवस्थित किया। अब तक यह मंदिर केवल नाथपंथी साधुओं का साधना केन्द्र और पर्यटक साधुओं और श्रद्धालुओं के लिए पूजा का मंदिर मात्र था। महंतजी ने इसे नाथ-योग के प्रचार और प्रसार का प्रमुख केन्द्र बनाया साथ ही हिन्दू धर्म और संस्कृति के

समस्त अंगों को प्रोत्साहित करने के लिए उन्होंने इसे महान सांस्कृतिक केन्द्र बना दिया। शिवावतार महायोगी गोरक्षनाथ की पूजा तो यहाँ नित्य होती ही थी। राम और कृष्ण के नामोच्चारणों से भी मंदिर का प्रांगण गुंजित होने लगा। ब्रिटिश शासन काल में इस मंदिर ने हिदू धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए निरंतर संघर्ष किया। अनेक विप्लवों के समय महंत दिग्विजयनाथ ने परिस्थितियों का डटकर सामना किया अन्यथा इस क्षेत्र में आज हिन्दू जाति का रूप कुछ दूसरा ही होता।

बहुमुखी प्रतिभा का विकासः-

सन् १९३५ में गोरक्षनाथ मंदिर के पीठाधीश्वर के पद पर अभिषिक्त होने के पश्चात महंत दिग्विजयनाथ के व्यक्तित्व को बहुमुखी प्रसार का अवसर मिला। सन् १९६९ में महासमाधि लेने के समय तक वे विभिन्न क्षेत्रों में अनवरत गति से कार्य करते रहे। उन्होंने समसामयिक समाज को सुधारने का प्रयास किया विभिन्न शिक्षा संस्थाओं तथा सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना करके नवयुवक वर्ग को नयी दिशा प्रदान की, साधु समाज की परम्परागत ऐकान्तिकता और निष्क्रियता को दूर कर, उन्हे सच्चे समाज-धर्म सेअवगत कराया और सक्रिय राजनीति में भाग लेकर राजनयिकों की अनवधानता दूर करने का प्रयास किया। राष्ट्र की बदलती हुई परिस्थितियों ने उन्हें हिन्दू धर्म और संस्कृति का सजग प्रहरी बना दिया। उन्होंने अपने व्यक्तित्व में विभिन्न विरोधाभासों को समन्वित कर लिया था। वे साधु होते हुए भी समाज से दूर न थे। विभिन्न संस्थाओं के संस्थापक होते हुए भी उनमें सर्वथा आसक्त न थे। राजनीति में रहते हुए भी कथनी-करनी में अंतर उपस्थित करने वाले आज के राजनीतिक छल -छद्य से उनका लगाव न था। समाज सुधारक के रूप में निरंतर कार्य करते हुए भी अपनी वैयक्तिक प्रभुता का उन्हें मोह न था। वे योगी होते हुए भी पूरे सामाजिक थे। उनके संग्रह में सेवा और त्याग का महान योग अन्तर्निहित था। वस्तुतः इस संग्रह और त्याग के सामरस्य ने ही उनको महान से महानतम बना दिया था।

हिन्दू धर्म और संस्कृति के सजग प्रहरीः-

हिन्दू जाति और धर्म के प्रति महंत जी का संस्कारगत प्रेम था। उनके शरीर में सिसोदिया वंश का रक्त प्रवाहित हो रहा था। राणा सांगा और महाराणा प्रताप की आन और मान रक्षा की भावना उन्हें वंशानुगत रूप में प्राप्त हुई थी। भगवान गोरक्षनाथ के मंदिर की पवित्रता और आध्यात्मिक गरिमा ने मान, रक्षा तथा हिन्दुत्व प्रेम के साथ ही हिन्दू संस्कृति की रक्षा की भावना को और भी दृढ़ कर दिया। देश की राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों ने भी उनके सांस्कृतिक भावों को सुदृढ़ किया। राष्ट्र और संस्कृति की रक्षा के लिए ही सन् १९३४ ई० तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सिद्धांतों को स्वीकार कर उन्होंने कार्य किया। किन्तु कांग्रेस की मुस्लिम-तुष्टीकरण की नीति से असंतुष्ट होकर उन्होंने उसे छोड़ दिया।

हिन्दू महासभा की सदस्यताः-

सन् १९३९ ई० में अमरवीर वी. डी. सावरकर काले पानी की सजा भुगत कर अंडमान से कलकत्ता आए। वहाँ अपने स्वागत में आयोजित एक विशाल सभा को उन्होंने सम्बोधित किया। उस अवसर पर भाई परमानंद और अमरवीर सावरकर के भाषणों को सुनकर महंतजी अत्याधिक प्रभावित हुए। उन्होंने उसी

समय हिन्दू महासभा की सदस्यता स्वीकार कर ली।

गोरखपुर की साम्प्रदायिक स्थितिः-

सन् १९३८-३९ में गोरखपुर का वातावरण भी साम्प्रदायिक भावनाओं के कारण विषाक्त हो गया था। इस अवसर पर हिन्दू जाति और हिन्दू धर्म की रक्षा का संकल्प लेकर महंतजी हिन्दू जाति के अग्रदूत के रूप में सामने आए।

गोरखपुर में साम्प्रदायिक प्रतिद्वन्दिता की भावना का जन्म सर्वप्रथम १९१६ में हुआ था। इस वर्ष हिन्दुओं का दशहरा और मुसलमानों का मुहर्रम संयोगवश एक साथ ही पड़ गया। काजी फिरासत हुसेन मुसलमानों के नेता थे। खजांची चौराहे पर नवें दिन की ताजिया बैठाई जाती थी। उस दिन वहाँ बड़ी चहल-पहल थी। अली नगर की रामलीला का जुलूस भी उसी रास्ते निकलता था। बड़े-बड़े रस्सों में बंधे रथ को खींचते हुए हिन्दू लोग जब मानसरोवर से खजांची के चौराहे पर पहुँचे तो काजी फिरासत हुसेन ने जुलूस को रूकवाना चाहा। अधिकारियों के हस्तक्षेप से जुलूस शान्तिपूर्वक निकल गया किंतु हिन्दू मुसलमानों के हृदय में पारस्परिक विभेद की गांठ दृढ़ हो गयी। सन् १९१६ के पश्चात नगर में हिन्दू-मुस्लिम विद्वेष की आग निरंतर सुलगती गई।

गोरक्षनाथ मंदिर की पूर्व दिशा में एक प्रतिष्ठित मुस्लिम रईस जाहिद बाबू ने जाहिदाबाद के नाम से एक मुहल्ला ही बसा दिया। वहाँ नित्य गौकशी हुआ करती थी। मुस्लिम लीग कार्यालय से मुसलमानों का एक जुलूस निकलता था। जुलूस में प्रश्न होता था कि कहाँ जाना है? उत्तर मिलता जाहिदाबाद। क्या करने? गौकशी करने। इस प्रकार के जुलूसों ने हिन्दू-मुस्लिम विद्वेष की आग में आहुति का काम किया। सन् १९३५ तक गोरखपुर में हिन्दू-मुस्लिम विद्वेष की भावना बहुत बढ़ गई थी। सन् १९३७ में स्थिति ऐसी हो गई थी कि महंत जी को सत्याग्रह करना पड़ा। इन दो वर्षों का समय गोरखपुर के लिए घोर साम्प्रदायिक आतंक का समय था। महंतजी ने बड़े साहस, धैर्य और बुद्धिमता से हिन्दू जाति की रक्षा की।

हिन्दू महासभा के मंच सेः-

हिन्दू महासभा की सदस्यता ग्रहण करते ही महंतजी सभा के प्रमुख नेताओं के वर्ग में समादृत होने लगे। कांग्रेस में रहते हुए भी वे हिन्दू हितों की रक्षा के लिए तत्पर रहते थे। सन् १९३४ के पूर्व उन्होंने कांग्रेस की उन नीतियों का विरोध किया था, जिनसे हिन्दू जाति और धर्म के ऊपर किसी प्रकार के आघात की आशंका थी। सन् १९३१ में कांग्रेस ने भारतीय जनगणना का विरोध किया था। महंतजी ने कांग्रेस की उस अदूरदर्शिता की निंदा की और देश में हिन्दुओं की संख्या को कम दिखाये जाने से रोका। सन् १९३५ में कांग्रेस ने साइमन कमीशन का विरोध किया। सन् १९४५ में क्रिप्समिशन का भी बहिष्कार किया। महंतजी ने दोनों अवसरों पर कांग्रेस की नीतियों का खुलकर विरोध किया। देश के विभाजन के अवसर पर महंत जी की बातें अधिक दूरदर्शितापूर्ण सिद्ध हुई।

हिन्दू महासभा के मंच से महंतजी को मुक्त रूप से कार्य करने का अवसर मिला। एक वर्ष पश्चात ही उन्होंने में अखिल भारत हिन्दू महासभा के वार्षिक अधिवेशन में भाग लिया। उस अवसर पर उनके भाषणों की सबने सराहना की। उन्होंने एक साथ ही धार्मिक और राजनीतिक कार्यों को अपने हाथ में लिया

और कुशलतापूर्वक उनका निर्वाह किया।

वे आगरा प्रांतीय हिन्दू महासभा के महामंत्री रहे। संयुक्त प्रांतीय हिन्दू महासभा के मंत्री और फिर अध्यक्ष चुने गये। सन् १९३९ में डॉ. मुन्जे की अध्यक्षता में उन्होंने कमिश्नरी हिन्दू महासभा के अधिवेशन का आयोजन किया। इसी वर्ष उन्होंने अखिल भारतवर्षीय अवधूत वेश बारह पंथ योगी महासभा की स्थापना की। अनेक वर्षों तक वे उसके अध्यक्ष रहे। साधु सम्प्रदाय को उन्होंने नवीन दिशा प्रदान की। निष्क्रियता और ऐकान्तिकता के स्थान पर उन्होंने समाज सापेक्ष्य कार्यों की ओर प्रेरित किया। उन्होंने समस्त हिन्दू मंदिरो और मठों को धीरे-धीरे संगठित किया और उनमे एकसूत्रता लाने का सफल प्रयास किया।

सन् १९३९ में दिल्ली शिव मंदिर सत्याग्रह में उन्होंने अपने गुरु भाई बाबा नौमीनाथ के नेतृत्व मे सत्याग्रहियों का जत्था भेजा था। मुल्तान की जेल में पर्याप्त समय तक सजा भुगतने के बाद यह जत्था मुक्त हुआ। इस वर्ष फौज में मुसलमानों की भर्ती पर अधिक जोर दिया जा रहा था। मुहम्मद अली जिन्ना यह चाहते थे कि फौज में मुसलमानों की संख्या अधिक हो जाये। महंत जी ने इस नीति का सख्त विरोध किया। फलतः हिन्दुओं की भी भर्ती होती रही।

सन् १९४२ में

ब्रिटिश शासन की दृष्टि पहले से ही महंतजी पर लगी हुई थी। सन् १९४२ में महात्मा गाँधी ने भारत छोड़ो आंदोलन का नेतृत्व किया। समूचा राष्ट्र विदेशी शासन सत्ता और विदेशी सामग्रियों के बहिष्कार के लिए उतावला हो रहा था। महंतजी को उस अवसर पर मुक्त न रहने देने के लिए नौकरशाही की ओर से उन पर अनेक आरोप लगाये गये। कहा गया कि नेपाल में राणा विरोधी आंदोलन के वही सूत्रधार हैं। यह भी कहा गया कि वे जर्मनी और जापान को अंग्रेजों के विरुद्ध मदद देते हैं। महंतजी के विरुद्ध वारंट निकाला गया। उस समय मि० यंग डी०आई० जी० के पद पर कार्य कर रहे थे। गोरखपुर में मि० वाडेल पुलिस अधीक्षक थे। यंग साहब हाकी के मैदान में महंतजी के साथ खेल चुके थे और उनके विचारों से पूर्णतया अवगत थे। उन्होंने अपने उत्तरदायित्व के आधार पर महंतजी के विरुद्ध भेजे गये वारंट को वापस करा दिया था।

सन् १९४४ में महंतजी ने प्रांतीय हिन्दू महासभा के वार्षिक अधिवेशन का आयोजन गोरखपुर में किया। डॉ० श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने इस अधिवेशन को सम्बोधित किया था। सन् १९४७ में भारत के विभाजन का प्रश्न भारतीय नेताओं के सम्मुख था। राजगोपालाचार्य ने विभाजन के संबंध में अपना सुझाव प्रस्तुत किया जो सी आर फारमूला के नाम से प्रसिद्ध है। महंतजी ने इस फारमूले का डटकर विरोध किया। उन्होंने गोरखपुर में इसी वर्ष अखिल भारतवर्षीय हिन्दू महासभा का अधिवेशन बुलाया। उस समय महंतजी आगरा प्रांतीय हिन्दू महासभा के अध्यक्ष थे। धर्मवीर भोपटकर की अध्यक्षता में होने वाला यह अधिवेशन राजनीतिक और धार्मिक दोनो दृष्टियों से महत्वपूर्ण था। उस समय भारत के विभाजन का चक्र तेजी से चल रहा था। नोवाखाली, त्रिपुरा, कोमिला आदि स्थानों पर हिन्दुओं के ऊपर संगठित ढंग

से आघात किये गये थे। महंतजी के प्रयास से इस अधिवेशन में अखण्ड भारत आंदोलन का शक्तिपूर्वक समर्थन किया गया था। दूसरी ओर परिस्थितियों को देखते हुए समस्त हिन्दू जाति को अपनी कट्टरता और रूढ़िवादिता को त्यागकर उदार होने की अपील की गई। इस अधिवेशन का तत्काल प्रभाव पड़ा। पाकिस्तान निर्माण का कार्य १९४६ में ही हो जाने वाला था। वह कम से कम एक वर्ष के लिए तो रूक ही गया।

ब्रिटिश नौकरशाही ने मुस्लिम लीग के नेताओं को पहले से ही प्रोत्साहन दे रखा था। उन्होंने मुसलमानों को महत्वपूर्ण प्रशासनिक पदों पर नियुक्त कर रखा था। ये मुसलमान अधिकारी विभाजन के अवसर पर बहुत घातक सिद्ध होंगे, यह सोचकर मंहतजी ने इसका खुलकर विरोध किया। उत्तर प्रदेश में उस समय ७० प्रतिशत प्रशासनिक पदों पर मुसलमान ही थे। पुलिस और गुप्तचर विभाग उन्हीं से भरा था। इन तत्वों के भीतर छिपी हुई कुटिल राजनीति को परख कर महंतजी ने ९ अगस्त १९४७ को लखनऊ में हिन्दुओं की १० सूत्रीय मांगों को लेकर सीधी कार्यवाही (Direct Action) का आंदोलन छेड़ दिया। वे गिरफ्तार कर लिए गये। उनके साथियों को भी जेल में डाल दिया गया। इसके पश्चात ही भारत विभाजन की घोषणा की जा सकी।

१९४६ के अखिल भारतीय हिन्दू महासभा अधिवेशन के पश्चात् महंतजी और श्री लक्ष्मी शंकर वर्मा हिन्दू महासभा की कार्यकारिणी समिति के सदस्य चुन लिए गये। महंतजी ने समस्त भारत का पर्यटन किया। उस समय और इसके पश्चात भी यथावसर कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली आदि स्थानों पर जाकर उन्होंने विभिन्न सभाओं में भाषण किया। इन सभी स्थानों पर वे सर्वाधिक पूज्य और सम्मानित हुए। १९४६ में उन्होंने लोकसभा की सदस्यता के लिये श्री श्रीप्रकाश के विरुद्ध परचा दाखिल किया था। किन्तु दुर्भाग्यपूर्ण परचा ही खारिज हो गया।

गाँधी हत्या काण्ड के छींटे (१९४८ ई०)

भारत विभाजन के पश्चात पाकिस्तान को अधिक से अधिक सुविधाएँ देने के लिए गाँधीजी ने सात सूत्रीय मांगो को लेकर अनशन प्रारम्भ कर दिया था। उन्होंने पाकिस्तान को ५५ करोड़ रुपये देने का आग्रह किया। भारतीय नवयुवकों का वर्ग इसे सहन न कर सका। नाथूराम गोडसे ने उतावली में गाँधीजी की हत्या कर दी। गोडसे ने हत्या का समूचा उत्तरदायित्व स्वयं ले लिया था, किन्तु तत्कालीन सरकार ने राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और हिन्दू महासभा के प्रभावशाली नेताओं की धरपकड़ प्रारम्भ कर दी। महंतजी पर आरोप लगाया गया कि उन्हीं की पिस्तोल से गोडसे ने गाँधीजी की हत्या की थी। उन्हे नजरबंद कर दिया गया था और १९ महीने तक वे बंदी जीवन व्यतीत करते रहे। इस अवसर पर मठ की समस्त चल और अचल सम्पत्ति भी जब्त कर ली गई थी किंतु महंतजी न्यायालय के द्वारा निर्दोष सिद्ध हुए।

नवजीवन को क्षमादान

गाँधी हत्या काण्ड के तुरंत बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। समूचे देश में हिन्दू महासभा विरोधी प्रचार कार्य चल रहा था। इसी समय कलकत्ते में हिन्दू महासभा का अधिवेशन

आयोजित किया गया था। अनेक लोगों ने इस अवसर पर बहाने बनाकर अधिवेशन में भाग नहीं लिया किंतु डाक्टर नारायण भास्कर खरे, वीर सावरकर, प्रो. देशपाण्डेय तथा महंतजी ने उसमे भाग लिया। महंतजी ने उसी अवसर पर हिन्दू युवक सभा का उद्घाटन किया।

गाँधी हत्याकाण्ड के संबंध में लखनऊ से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र ''नवजीवन' ने महंत जी के ऊपर खूब कीचड़ उछाला। आरोप सिद्ध न होने पर महंत जी कारावास से मुक्त हुए। उन्होंने ''नवजीवन' के ऊपर एक लाख रुपये की मान-हानि का दावा कर दिया। सिविल जज के न्यायालय से नवजीवन के विरुद्ध व्यय सहित एक लाख रुपये की डिग्री हो गई। किंतु ''नवजीवन'' के सम्पादकों और व्यवस्थापकों ने महंत जी से व्यक्तिगत रूप से मिलकर तथा समाचार पत्रों के माध्यम से जब क्षमा मांगी तो उदार हृदय महंत जी ने उसे क्षमा कर दिया। नवजीवन को नया जीवन मिल गया। अन्यथा उसके दिवाले की स्थिति आ जाती।

सन् १९४८ के पश्चात महंतजी ने अपना जीवन राष्ट्र-हित के कार्यों में लगा दिया नेहरू- लियाकत पैक्ट के द्वारा हिन्दू हितों पर आघात होते देखकर उन्होंने उसका विरोध किया। शेख अब्दुल्ला द्वारा काश्मीर के अलग राज्य की मांग को उन्होंने राष्ट्रद्रोही कार्य कहा। गोवा, दमन, दीव की स्वाधीनता का उन्होंने पूर्ण समर्थन किया और स्वाधीनता संग्राम को उग्र बनाने के लिए उन्होंने स्वयंसेवकों का जत्था भेजा। गोरक्षा आंदोलन का देशव्यापी प्रचार किया। अयोध्या में राम जन्म भूमि के उद्धार कार्य में उन्होंने हार्दिक सहयोग प्रदान किया। सन् १९५५-५६ में मास्टर तारासिंह ने पृथकपंजाबी सूबे की मांग की। इस मांग को लेकर उन्होंने आमरण अनशन भी प्रारम्भ कर दिया। महंत दिग्विजयनाथ राष्ट्रीय एकता को किसी भी मूल्य पर खंडित होते नहीं देखना चाहते थे। उन्होंने मास्टर तारा सिंह से भेंट की। परिस्थिति की गंभीरता और उसके भावी परिणाम से परिचित कराया। अन्ततः मास्टर तारा सिंह ने अनशन त्याग दिया। इससे ब्रह्मलीन महंतजी की निष्ठा, दूरदर्शिता, सूझबूझ एवं राजनीतिक प्रभाव का परिचय प्राप्त होता है।

११ मई सन् १९५७ में दिल्ली में प्रथम स्वाधीनता संग्राम का शताब्दी समारोह मनाया गया। इस समारोह की अध्यक्षता स्वातंत्र्य सेनानी वीर सावरकर जी ने की थी। भारत की स्वतंत्रता के लिए आजीवन संघर्षशील महंतजी ने इस समारोह में अपना पूरा सहयोग प्रदान किया था। समारोह की सफलता का श्रेय चाहे जो ले किंतु समारोह की सच्ची भावना के प्रतीक दो ही नेता थे, वीर सावरकर और महंत दिग्विजयनाथजी।

सन् १९५९ में काशी विश्वनाथ मंदिर उद्धार आंदोलन में उन्होंने भाग लिया। दफा १४४ को भंग करने के आरोप में उनके अनेक सहकर्मी गिरफ्तार हो गये। महंतजी ने राज्यपाल को पत्र लिखकर मंदिर के उद्धार के औचित्य पर बल दिया। भारत गणराज्य की स्वदेशी सरकार हिन्दू कोड बिल, हिन्दू विवाह और तलाक तथा हिन्दू सम्पत्ति उत्तराधिकार अधिनियम जैसे कानूनों का निर्माण कर हिन्दू सत्वों पर कुठाराघात कर रही थी। महंतजी ने इन बिलों का विरोध किया। सन् १९६० में हरिद्वार में अखिल भारतीय षट्दर्शन साधु सम्मेलन के अध्यक्ष पद से उन्होंने इन बिलों का विरोध किया और अपने ओजस्वी भाषणों से उनके विरुद्ध जनमत जागृत किया।

राष्ट्रीय संकट का वर्ष १९६२:-

बाहा और आंतरिक दोनों दृष्टियों से सन् १९६२ का वर्ष देश के लिए घोर संकट का समय था। उस समय तक पंचशील के सिद्धांतों पर आधरित हिन्दी- चीनी मैत्री का संबंध टूट चुका था। चीन ने लगभग १२ सहस्त्र वर्गमील भारतीय भूमि पर अधिकार कर लिया था। युद्ध की आशंका बलवती होती जा रही थी। इधर देश में बढ़ती हुई मुस्लिम साम्प्रदायिकता की भावना नयी दिशा की ओर संकेत कर रही थी। केरल में मुस्लिम लीग की स्थापना हो चुकी थी। पाकिस्तान के संकेतों पर देश में ही पंचमार्गियों का एक बहुत बड़ा वर्ग प्रस्तुत हो रहा था। सन् १९६१ में अखिल भारतीय स्तर पर मुसलमानों को संगठित करने का प्रयास हुआ था। दिल्ली में उनकी एक विशाल सभा हुई। भारत की किसी भी राजनीतिक संस्था ने इस साम्प्रदायिक सम्मेलन के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं कहा। महंतजी ने उसी समय यह आशंका व्यक्त की कि यह मुस्लिम सम्मेलन मुस्लिम लीग के संगठन और देश के पुनर्विभाजन की नींव को मजबूत करने वाला है। उन्होंने उसका खुलकर विरोध किया।

अक्टूबर १९६१ में महंतजी ने मुस्लिम साम्प्रदायिकता का विरोध करने के लिए अखिल भारतीय हिन्दू सम्मेलन का आयोजन दिल्ली में किया। सम्मेलन की अध्यक्षता कलकत्ता उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति और बंगाल विधान परिषद के सदस्य डॉ. चिंतामणि देशमुख ने भी भाग लिया था। जनरल करियप्पा ने भी इस सम्मेलन में उपस्थित होकर अपने राष्ट्र प्रेम का परिचय दिया था। महंतजी ने उस सम्मेलन को मुस्लिम साम्प्रदायिकता के बढ़ते हुए रोग के लिए एक मात्र औषधि कहा था।

हिन्दू महासभा के अध्यक्ष:-

हिन्दू महासभा ने सन् १९६० में महंतजी को महासभा का अध्यक्ष निर्वाचित किया था। वे हिन्दू जाति के राष्ट्रपति कहे गये। देश की बिगड़ती हुई स्थिति को देखते हुये महंतजी ने हिन्दू राष्ट्रपति के अनुरूप आचरण करके हिन्दू जाति और धर्म की रक्षा का अथक प्रयास किया। अखिल भारतवर्षीय हिन्दू महासभा के अधिवेशन में उन्होंने अपने समस्त आलोचकों और विरोधियों को जो उत्तर दिया था। वह ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा ही महत्वपूर्ण था।

विश्व हिन्दू धर्म सम्मेलन:-

सन् १९६५ में महंतजी ने अखिल विश्व हिंदू धर्म सम्मेलन का आयोजन दिल्ली में किया। इस सम्मेलन मे विभिन देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। तीन जगतगुरु शंकराचार्यों की उपस्थिति बड़ी महत्वपूर्ण थी। डॉ. राधा कृष्णन ने भी सम्मेलन को सम्बोधित किया था।

लोकसभा के मंच से:-

सन् १९६७ में महंतजी ने गोरखपुर संसदीय निर्वाचन क्षेत्र से हिन्दू महासभा के प्रत्याशी के रूप में कांग्रेस के प्रत्याशी को पराजित कर लोकसभा का चुनाव जीता। लोकसभा में वे हिन्दू महासभा के एक मात्र सदस्य थे। अकेले होते हुए भी लोकसभा के प्रत्येक विवाद में अपनी वाग्मिता, चातुर्य एवं प्रत्युत्पन्नमतित्व

के कारण उन्होंने सदैव सबका ध्यान आकर्षित किया। यों तो उनकी हिन्दू राष्ट्रवादी विचारधारा के कारण मुसलमानों और साम्यवादी सदस्यों में उत्तेजना का वातावरण उत्पन्न हो जाता था तथापि वे अपने विचारों को निर्भीकता के साथ अभिव्यक्त करने से चूकते न थे। नक्सलियों की समस्या पर उन्होंने सदैव कम्युनिस्टों को ललकारा। परिवार नियोजन के प्रश्न पर हिन्दू हितों की हमेशा वकालत की। गोरक्षा अभियान का अखिल भारतवर्षीय स्तर पर नेतृत्व किया। पूर्वोत्तर रेलवे की छोटी लाइन को बड़ी लाइन के रूप में परिवर्तित करने की स्वीकृति उन्हीं के प्रयास से मिली।

नाथ पंथ का प्रचार और प्रसारः-

गोरखनाथ मंदिर के महंत के रूप में महंत दिग्विजयनाथ जी ने नाथ पंथी मंदिरों और मठों को संगठित करने का प्रयास किया। इन मठों में रहने वाले योगियों को उन्होंने उनके सामाजिक दायित्व से परिचित कराया। नाथ पंथ संबंधी साहित्य के उद्धार का भी उन्होंने सम्यक् प्रयास किया। उन्होंने प्रामाणिक विद्वानों से अनेक ग्रन्थों का प्रणयन कराया। महंत दिग्विजय नाथ ट्रस्ट और गोरखनाथ मंदिर की ओर से अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए। 'फिलासफी आफ गोरखनाथ' पुस्तक की सराहना महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज एवं पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी प्रभृति विद्वानों ने की है। इस बहुप्रशंसित पुस्तक का हिन्दी अनुवाद भी गोरखदर्शन के नाम से प्रकाशित हो चुका है। ट्रस्ट तथा मंदिर ने उनके सानिध्य मे निम्नांकित प्रकाशन भी कराया :-

१. हिन्दू धर्म और संस्कृति (हिन्दी)
२. आदर्श योगी योगिराज गम्भीरनाथ (हिन्दी)
३. नाथ योग एक परिचय (हिन्दी)
४. योगिराज गम्भीरनाथ (अंग्रेजी)
५. नाथ योग (अंग्रेजी)
६. योग रहस्य (हिन्दी)
७. आदर्श योगी (हिन्दी)
८. एक सत्यान्वेषी के अनुभव (अंग्रेजी)
९. गोरख दर्शन (हिन्दी)

इन पुस्तकों के प्रकाशन के अतिरिक्त महंतजी ने एक विशाल पुस्तकालय की भी स्थापना की है, जिसमें नाथ योग तथा हिन्दू धर्म और संस्कृति से संबंधित सहस्त्रों पुस्तकें संग्रहित हैं। इस पुस्तकालय का निरन्तर विकास किया जा रहा है। भारतीय धर्म और साहित्य पर शोध करने वाले छात्रों के लिए इस पुस्तकालय को व्यवस्थित करने का प्रयास चल रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में

गोरखपुर जैसे पिछड़े जनपद की जनता को केवल धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक कार्यों के

द्वारा प्रगति के पथ पर लाना संभव न था। उन्हें शिक्षित तथा प्रबुद्ध करना नितान्त आवश्यक था। इसीलिए गद्दी पर बैठते ही महंत दिग्विजयनाथजी से शिक्षा के प्रसार पर विशेष ध्यान दिया। उन्होंने सर्वप्रथम 'गुडलक स्कूल' के नाम से एक अंग्रेजी स्कूल की स्थापना की जो बक्शीपुर मे एक किराये के भवन में चलने लगा तथा श्री यदुनाथ चक्रवर्ती उसके प्रथम प्रधानाचार्य थे। कालांतर में इसी विद्यालय से दो विद्यालयों की स्थापना हुई। आर्य समाज मंदिर के संरक्षण में डी.ए.वी. कालेज खुला और महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् के संरक्षण में महाराणा प्रताप इन्टर कालेज की स्थापना हुई। महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् की स्थापना महंतजी ने गोरखपुर के शैक्षणिक जगत् में एक क्रांति सी पैदा कर दी। इस परिषद के तत्वावधान में प्रारम्भिक शिक्षा से लेकर उच्चतम शिक्षा प्रदान करने तक की व्यवस्था हुई प्रारम्भिक शिक्षा के लिए महाराणा प्रताप शिशु शिक्षा विहार, रामदत्तपुर में और दूसरा सिविल लाइन्स में खोला गया। हाई स्कूल और इंटरमीडिएट की शिक्षा के लिए महाराणा प्रताप इण्टर कालेज की स्थापना हुई, जो इस जनपद की प्रमुख शैक्षणिक संस्था है। इसी विद्यालय के प्रांगण में महाराणा प्रताप डिग्री कालेज की स्थापना हुई। महिलाओं के लिए अलग से महाराणा प्रताप महिला डिग्री कालेज खुला। गोरखपुर में विश्वविद्यालय की स्थापना होने पर उसकी प्रगति और उन्नति में सहयोग देने के विचार से महंतजी ने इन दोनों डिग्री कालेजों को विद्यालय भवन और उसके समस्त उपकरणों के साथ विश्वविद्यालय को दान कर दिया। गोरखपुर की किसी अन्य संस्था ने कभी भी इस प्रकार का दान नहीं किया होगा। वस्तुतः महंतजी संस्थाओं के स्वामित्व के लोभी न थे। उनका उद्देश्य महान था। वे किसी भी मूल्य पर गोरखपुर में विश्वविद्यालयी शिक्षा की व्यवस्था करना चाहते थे। इसीलिए इतनी बड़ी सम्पत्ति का दान करते हुए उन्हें तनिक भी हिचक न हुई। विश्वविद्यालय स्थापना समिति के वे वरिष्ठ उपाध्यक्ष थे। उसकी स्थापना में उन्होंने तन, मन और धन से सहयोग दिया।

ओवरी चौक में इन्हीं के नाम से दिग्विजयनाथ हाई स्कूल की स्थापना हुई। भारतीय धर्म और संस्कृति का प्राचीन पद्धति से अध्ययन करने के लिए उन्होंने मंदिर परिसर में ही श्री गोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ की स्थापना की। दिवंगत होने के कुछ दिनों पूर्व उन्होंने दिग्विजयनाथ डिग्री कालेज की स्थापना की। उन्होंने एक कृषि महाविद्यालय की स्थापना का प्रयास भी किया था। किंतु आकस्मिक रूप से इह लीला समाप्त हो जाने के कारण यह संकल्प पूर्ण न हो सका।

प्रौद्योगिक शिक्षा

पौरस्त्य एवं पाश्चात्य ढंग की महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालयी शिक्षा के साथ महंतजी प्रौद्योगिक शिक्षा की भी व्यवस्था करना चाहते थे। उन्होंने महाराणा प्रताप पालिटेकनीक इन्स्टीच्यूट की स्थापना की। पूर्ण विकसित एवं पल्लवित करके उन्होंने इसे सरकारी संरक्षण में दे दिया। उन्होंने एक इंजीनियरिंग कालेज खोलने की योजना भी बनाई थी। विश्वविद्यालय की स्थापना के साथ उसी के तत्वावधान में उन्होंने इंजीनियरींग कालेज को विकसित करने में सहयोग दिया। महंतजी ने गोरखपुर में मेडिकल कालेज खोलने का भी प्रयास किया था। उसी प्रयास के फलस्वरूप यहाँ मेडिकल कालेज खोलने की घोषणा हुई। महंतजी ने शिक्षा के विकास का बहुविध प्रयास किया। इस क्षेत्र में उनकी उपलब्धियाँ सदैव स्मरणीय रहेंगी।

गिरता स्वास्थ्य

महंतजी सन् १९६३ से ही अस्वस्थ रहने लगे थें इस समय उनकी अवस्था ७० वर्ष की थी। गोरखपुर के उच्चकोटि के डाक्टरों ने उनका इलाज किया। १९६६ में आल इंडिया इंस्टीच्यूट आफ मेडिकल साइंस, नई दिल्ली में दवा कराई गयी। लोकसभा का सदस्य हो जाने पर दिल्ली में निरंतर डाक्टरों से सम्पर्क स्थापित किया। ऐसी अवस्था में भी विवादात्मक प्रश्नों पर विशेष रूप से हिन्दू हितों से सबंधित प्रश्नों पर अपने स्वास्थ्य का ध्यान न रखते हुए अपने आदर्शों को चरितार्थ करने के लिए वे निरंतर सक्रिय रहे।

चिर समाधि

सितम्बर १९६९ के अन्तिम सप्ताह में महंतजी पुनः अस्वस्थ हो गये। डाक्टरों ने पूर्ण निष्ठा के साथ उनकी दवा की। २६ से २८ सितम्बर तक वे दवा के बल पर मृत्यु से जूझते रहे। अनेक बार दिल के दौरे पड़े, किन्तु उनका मस्तिष्क उस समय भी रबात सम्मेलन और मुस्लिम साम्प्रदायिकता का समाधान ढूँढने में ही लगा रहा था। २८ सितम्बर को अपरान्ह् में उनकी स्थिति बिगड़ने लगी और उसी दिन ५ बजकर ३० मिनट पर उन्होंने चिर समाधि ले ली।

अन्तिम दर्शन

महंतजी की मृत्यु का समाचार विद्युत गति से चहुँ ओर में फैल गया। अंतिम दर्शन की आकांक्षा से बड़ी संख्या में लोग गोरक्षनाथ मंदिर के प्रांगण में एकत्र होने लगे। श्रद्धालुओं की सुविधा के लिए स्वर्गीय महंतजी के पार्थिव शरीर को २४ घन्टे के लिए गोरक्षनाथ मंदिर के प्रांगण में दर्शनार्थ रखा गया। दूसरे दिन लगभग १५ लाख व्यक्तियों ने उस महामानव के दर्शन किये और उनके प्रति अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये।

देश के कोने-कोने से लोग दर्शनार्थ दूसरे दिन तक गोरखपुर में उपस्थित हो गये। संवेदना के तारों और पत्रों की तो कोई गिनती ही नहीं थी। भारत के लगभग समस्त समाचार पत्रों ने उनकी मृत्यु के समाचारों को प्रथम पृष्ठ पर स्थान दिया और अपने अग्रलेखों के द्वारा उन्हें श्रद्धांजलियाँ अर्पित की। वस्तुतः महंतजी की मृत्यु इस देश के लिए एक राष्ट्रीय घटना थी। श्री महंतजी हिन्दुओं लिए आधुनिक युग के महाराणा प्रताप थे। उनमें ब्रह्मबल और क्षात्रबल का अद्भुत समन्वय था। उनकी स्मृतियाँ यावत् चन्द्रदिवाकारौंसदृश जन-मानस पर छाईं रहेंगी।

देश के प्रमुख धर्माचार्यों, राजनीतिज्ञों तथा समाजसेवियों ने श्री महंतजी को इन शब्दों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की :-

जगतगुरु शंकराचार्य श्री निरंजन देव तीर्थ, शंकराचार्य मठ पुरीः-

श्री गोरक्षनाथ मंदिर, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश के ब्रह्मलीन महंत, अखिल भारत हिन्दू महासभा के भूतपूर्व अध्यक्ष, विश्व-हिन्दू धर्म सम्मेलन के संस्थापक एवं संसद सदस्य श्री दिग्विजयनाथ के महान् व्यक्तित्व से सम्पूर्ण भारत भलीभाँति परिचित हैं। उन्होंने देश और समाज की जो सेवाएं की हैं, उनसे

समाज का भारी उपकार हुआ है। राजनीति- धर्म, संस्कृति, शिक्षा एवं समाज-सेवा आदि विविध क्षेत्रों में उनके द्वारा किये गए कार्य चिरकाल तक उनकी स्मृति को संजोये रखेंगे। श्री गोरक्षनाथ के भव्य मन्दिर का पुनर्निर्माण, महाराणा प्रताप इण्टर कॉलेज, महाराणा प्रताप पॉलीटेकनीक, श्री गोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ, महाराणा प्रताप शिशु शिक्षा विहार आदि संस्थाओं की स्थापना उनके पुण्य कार्य हैं, जो उन्हें यावत् चन्द्रदिवाकरौ अजर-अमर रखेंगे। गोरखपुर विश्वविद्यालय की स्थापना में भी वे अग्रणी रहे हैं। पूर्वी जिलों की जनता की भावनाओं को उन्होंने स्वर प्रदान किया है। हिन्दी, हिन्दू एवं हिन्दुस्तान के वे मूर्तिमान स्वरूप थे। जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है, जो उनसे अछूता रहा हो। ऐसे महान पुरुष की स्मृति को बारम्बार स्मरण करते हुये अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

अभिनव सच्चिदानंद पुरी जगद्गुरु शंकराचार्य श्री शारदा पीठ, द्वारका

महंत श्री दिग्विजयनाथ जी ने एक बार इसी आबू पर्वत पर सन् १९५१ ई. में आकर मुझसे हिन्दू संगठन की महत्वपूर्ण बात की थीं। वे निर्भीक नेता थे। उनका सारा जीवन भारत राष्ट्र एवं हिन्दू संस्कृति की रक्षा के लिए समर्पित था। उनके स्मरण से हिन्दुओं में यदि थोड़ी भी पुनर्जागृति आयेगी तो यह महान कार्य होगा। हिन्दू जाति धीरे-धीरे जागती है। हिन्दू समाज में सब कुछ है, परन्तु जागृति एवं संगठन की कमी है।

शांतानन्द सरस्वती जगद्गुरु श्री शंकराचार्य ज्योतिर्मठ बद्रिकाश्रम

ब्रह्मलीन श्रीमान् महंत दिग्विजयनाथ जी को भारत का कौन ऐसा आस्तिक व्यक्ति है, जो नहीं जानता है। उनके द्वारा भारतीय जनता में भारतीय संस्कृति का प्रचार एवं हिन्दू जनता का महान उपकार हुआ है। वे हर प्रकार के जन समाज के लिए व्यावहारिक एवं पारमार्थिक जीवन के महान उपकारी थे। ऐसे महापुरुषों का दर्शन भी वर्तमान समय में दुर्लभ है। अब तो उनके पवित्र चरित्रों के रूप में ही दर्शन हो सकते हैं। बहुधा हमें उनसे मिलने का शुभ अवसर उपस्थित हुआ था - उनके आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक जीवन में बहुत ही उदारता का परिचय प्राप्त हुआ है।

श्री गोपाल स्वरूप पाठक, उपराष्ट्रपति भारत

श्री महंत दिग्विजयनाथ जी महाराज ने देश, राष्ट्र एवं धर्म की बहुत बड़ी सेवा की है। उनका व्यक्तित्व महान था और जो कोई भी उनसे मिलता था प्रभावित हुए बिना न रहता था। उनके निधन से राष्ट्र की अपूरणीय क्षति हुई है।

श्री गुरुदयाल सिंह ढिल्लन, अध्यक्ष लोकसभा

मैं सदन को बड़े दुख के साथ अपने ५ सदस्यों के निधन की सूचना दे रहा हूँ। इनमें श्री महंत दिग्विजयनाथजी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर क्षेत्र से लोकसभा के सदस्य थे। १९६९ में सदन की सदस्यता के लिए निर्वाचित होने के उपरान्त वे सदन की कार्यवाही और सभी संबंधित समितियों की बैठकों में बड़े उत्साह के साथ भाग लेते थे। सदन में वे काफी लोकप्रिय थे। वे दृढ़ विचारों के व्यक्ति थे और अपने विचार बड़ी निर्भीकता से प्रकट करते थे। वे अपने समय के एक बहुत बड़े क्रांतिकारी थे। अचानक गोरखपुर में

२८ सितम्बर १९६९ ई. को ७४ वर्ष की आयु में उनका देहावसान हो गया। मैं उनके निधन पर गहरा शोक प्रकट करता हूँ और सदन की भावनाओं के साथ उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए धर्म परिवार के साथ संवेदना प्रगट करता हूँ।

श्रीमती इंदिरा गाँधी प्रधानमंत्री, भारत सरकार

श्रीमान अध्यक्ष महोदय, दिवंगत आत्माओं को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए मैं सदन की भावनाओं के साथ अपने को सम्बद्ध करती हूँ। श्री महंत दिग्विजयनाथजी का शिक्षा एवं धर्म के क्षेत्र में बहुत ही ऊँचा स्थान है। उनका नाम असहयोग आंदोलन के साथ भी जुड़ा हुआ है। साइमन कमीशन और हैदराबाद के सत्याग्रह से भी वे संबंधित रहे है। वे प्रसिद्ध गोरखनाथ मंदिर के महंत थे और उन्होंने गोरखपुर विश्वविद्यालय की स्थापना का भी महान कार्य किया था। अध्यक्ष महोदय, मेरा निवेदन है कि आप मेरी हार्दिक संवेदना उनके धर्म-परिवार तक पहुँचा दें।

जगदाचार्य स्वामी नारदानन्द सरस्वती, नैमिषारण्य, सीतापुर

श्री महंत दिग्विजयनाथजी महाराज एक महान व्यक्ति थे। १९४६ ई. में उनके द्वारा गोरखपुर में आयोजित अखिल भारत हिन्दू महासभा के विशाल ऐतिहासिक अधिवेशन में सम्मिलित होने का मुझे भी अवसर मिला था। उस समय मैंने उनके व्यक्तित्व की एक झलक देखी थी। समस्त साधु समाज को उन पर गर्व था।

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रेस

गोरखनाथ पीठ, गोरखपुर के महंत श्री दिग्विजयनाथजी महाराज यो तो सारे विश्व के हितैषी थे, पर हिन्दू धर्म एवं हिन्दू राष्ट्र के वे स्तम्भ ही थे। वे अपने सिद्धांत के पक्के, दृढ़विश्वासी, स्पष्टभाषी और निर्भीक राष्ट्रप्रेमी होने के साथ ही बड़े विचारशील और मिलनसार थे। सभी क्षेत्रों में उनका प्रभाव था और उनके प्रति सभी का प्रेम था। उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में बहुत बड़े-बड़े कार्य किये। गोरखनाथ मंदिर क्षेत्र का तो उन्होंने बड़ा सुन्दर पुनर्निर्माण ही करा दिया। गीता प्रेस के प्रति और व्यक्तिगत रूप से मेरे प्रति उनका जो स्नेह और आत्मीयता थी, उसका कोई मूल्य नहीं है। वह विपत्ति में पड़े हुए प्रत्येक व्यक्ति के अवलम्बन थे। हम लोगों के लिए तो उनका बड़ा सहारा था। देशवासियों का यह कर्त्तव्य है कि वे उनका पदानुसरण करके सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार के द्वारा उन्हें वास्तविक श्रद्धांजलि अर्पण करें।

महंत श्रेयोनाथ, भूतपूर्व स्वास्थ्य मंत्री, हरियाणा, गद्दी स्थल बोहर, जिला-रोहतक

श्रद्धेय महंतजी ने योगी महासभा, योगी सम्प्रदाय, हिन्दू समाज तथा समूचे देश की जो सेवायें की हैं, वे बेजोड़ हैं। वे एक निस्पृह, उदार तथा साथ ही बहुत ही वीर नेता थे। भारत के इतिहास में उनकी देन अद्भुत तथा बेमिसाल है। उन सरीखे निर्भीक तथा सत्यनिष्ठ व्यक्ति देश में बहुत ही दुर्लभ हैं।

महंत घनश्याम गिरि, एम.एल.ए, हरिद्वार

साधु-समाज, हिन्दुत्व रक्षक, महंत दिग्विजयनाथ जी के निधन से हार्दिक दुख हुआ। श्रद्धांजलि अर्पित है।

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, भूतपूर्व राज्यपाल, उ.प्र.

श्री महंत दिग्विजयनाथ जी हमारे मित्रों में से एक थे। उन्होंने गोरखपुर में उच्चस्तरीय शिक्षण के प्रोत्साहन कार्य में बड़ी सहायता प्रदान की है।

श्री माधव सदाशिव राव गोलवलकर

सर संघचालक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, नागपुर

श्री दिग्विजयनाथजी के स्वर्गवास से अधिक दुख हुआ।

श्री भक्तदर्शन, भूतपूर्व राज्यमंत्री, केन्द्रीय सरकार

महंत दिग्विजयनाथजी बड़े कर्मठ समाजसेवी और राष्ट्र-प्रेमी व्यक्ति थे। मुझे उनके आशीर्वाद मिलते रहते थे।

चौधरी चरणसिंह, भूतपूर्व मुख्यमंत्री, उ.प्र.

महंतजी के निधन पर हार्दिक शोक।

श्री यादवेन्द्रदत्त दुबे, राजा जौनपुर

श्री महंतजी के असामयिक निधन पर हार्दिक शोक।

रज्जू भैया, प्रांत संचालक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, उ.प्र.

असीम दुःख, श्रेष्ठ राष्ट्रभक्त उठ गया। भगवान धैर्य दें।

श्री विक्रम नारायण सावरकर, प्रधानमंत्री

अखिल भारत हिन्दू महासभा, नागपुर

पूजनीय महंत श्री दिग्विजयनाथजी के दुःखद देहांन्त से हिन्दू राष्ट्र, हिन्दू समाज तथा हिन्दू महासभा की अपरिमित क्षति हुई है। हिन्दू महासभा की विनम्र श्रद्धांजलि।

श्री अटल बिहारी वाजपेयी, अध्यक्ष जनसंघ

हिन्दू समाज और धर्म के लिए महंतजी ने जो कार्य किया, उसको स्थायी बनाने का प्रयत्न होना चाहिए।

महाराज श्री १००८ स्वामी कपिलदेवाचार्य

परमादरणीय, सम्मानयोग्य श्री महंतजी की असामयिक मृत्यु की सूचना प्राप्त हुई। सुनकर हृदय को बड़ा धक्का लगा कि भारत माता का एक सपूत माता की गोदी को छोड़कर ब्रह्मलीन हो गये। निकट भविष्य में इस रिक्त स्थान की पूर्ति कठिन है। परलोक में महंतजी की आत्मा को शांति प्राप्त हो। हार्दिक संवेदना एवं सहानुभूति स्वीकार करें।